कुण्डलिनी: स्वरुप, जागरण एवं फलश्रुति

(साहित्यिक सर्वेक्षण के परिपेक्ष्य में एक विवेचनात्मक अध्ययन)

डॉ. अरुण कुमार साव
सहायक प्राध्यापक, योग शिक्षा विभाग, डॉ. हरीसिंह गौर विश्वविद्यालय, सागर म.प्र.
Email: drarunsao@gmail.com

सारांश

योग विज्ञान भी अन्य शास्त्रों के उक्ति 'यत्र ब्रह्माण्डे तत्र पिण्डे ' को पूर्णतया स्वीकारता है। इसके अनुसार जो ब्रह्माण्ड में है, वही इस पिण्ड अर्थात् मनुष्य देह में भी है। अतः परमचेतना ब्रह्माण्ड की भाँति मनुष्य में भी विद्यमान हैं, उनका निवास स्थान मस्तिष्क का सहस्रार चक्र है और उन्हीं का विमर्श स्वरूप-शक्तितत्त्व मनुष्य में कुण्डलिनी के रूप में विद्यमान है। मनुष्य के स्तर पर यह कुण्डलिनी या शक्ति अपनी अचेतन प्रसुप्तावस्था में अधोमुखी रूप में पड़ी रहती है। इसके जागरण व उत्थान से मानव चेतना परमात्म चेतना में रूपान्तरित हो जाती है।

मानव चेतना सामान्यतः अपने इस अविकसित रूप में शरीराध्यास में डूबी रहती है। इसी का चित्रण कुण्डलिनी विज्ञान में मूलाधार में सोयी सर्पिणी के रूप किया गया है। उसका मुख नीचे की ओर है और उससे विष झरता है। यह कुण्डलिनी प्राण का भण्डार है। इसकी साधना द्वारा प्रसुप्त अचेतन स्थिति से जगाकर मानव चेतना का विकास किया जा सकता है।

कुटशब्द:- योग विज्ञान, कुण्डलिनी, मानव चेतना, परमात्म चेतना, मूलाधार एवं सहस्रार चक्र।

प्रस्तावना

मानव चेतना के उत्कर्ष, जागृति और पूर्णत्व के साधनों के संदर्भ में विचार करने पर सर्वप्रथम जिस शब्द से चिंतन-चेतना सर्वप्रथम प्रकाशित होती है वह है - कुण्डलिनी शक्ति। कुण्डलिनी की प्रचण्ड क्षमता, सामर्थ्यों और इसके जागरण एवं सिद्धि संबंधी वर्णन से भारतीय वांग्मय भरा पड़ा हैं। मानवीय मन में भी इस सम्बंध में आकांक्षा, अभीप्सा और कौतुहल दृष्टिगत होती है। परन्तु वह अनेकों भ्रम में उलझा रहता है जबकि इसका यथार्थ स्वरूप कुछ और ही है।

 Copyright ⓒ 2020Authors

साधना विज्ञान के अन्तर्गत व्यष्टिगत और समष्टिगत चेतना के रहस्यों को जानने-समझने के लिए विभिन्न योग प्रणालियों का विकास हुआ है। ज्ञानयोग, भक्तियोग, मंत्रयोग, तंत्रयोग, कर्मयोग, लययोग आदि योग की अनेक शाखाएँ-प्रशाखाएँ कालक्रम के अन्तराल में प्रस्फुटित-विकसित हुई हैं। कुण्डलिनी योग की साधना भी ऐसी ही एक प्राचीनतम योग पद्धति के रूप में महत्त्वपूर्ण स्थान रखती है। कुण्डलिनी योग को तंत्र साधना के अन्तर्गत माना जाता है। वस्तुतः यह योग, शक्ति साधना का गूढ़ और गम्भीर विज्ञान है।[1] उपनिषद् में कहा गया है- 'यद् ब्रह्माण्डे तत् पिण्डे।' अर्थात जो ब्रह्माण्ड में है वही इस पिण्ड अर्थात मानव शरीर में है। ऋषियों ने ब्रह्माण्डीय चेतना को ब्रह्म और पिण्ड की चेतना को आत्मा के रूप में प्रतिपादित करते हुए अभिन्न बताया है।[2] तात्पर्य यह है कि अखिल ब्रह्माण्ड के रहस्य, दृश्य और अदृश्य सम्भावनाओं - क्षमताओं का भण्डार मनुष्य के भीतर भी मौजूद है, किन्तु इसे प्रकट करने के लिए अनेक प्रयास करने पड़ते हैं। सामान्य क्रम में वह इससे अनभिज्ञ ही रहता है। कुण्डलिनी योग साधना इस भीतर के ब्रह्माण्ड के जागरण की साधना है। चूँकि समस्त ब्रह्माण्डीय संचालन का आधार चैतन्य शक्ति है, इसलिए कुण्डलिनी योग को शक्ति साधनाओं में सर्वोच्च कहा गया है। इसका लक्ष्य है सर्वोच्च चेतना की, आत्मज्ञान की प्राप्ति।[3]

योगशास्त्रों में कुण्डलिनी तत्त्व की विवेचना अलंकारिक रूपों में हुई है। कुण्डलिनी आत्मशक्ति की प्रकट और प्रखर स्फुरणा है। यह जीव को ईश्वर द्वारा दिया गया मौलिक शक्ति है। प्रसुप्त स्थिति में यह अविज्ञात और सुषुप्त पड़ी रहती है। आत्मसाधन द्वारा अनुभव किया जा सकता है कि वह ब्राह्मीशक्ति अपने ही भीतर में छिपी पड़ी है, जिसे कामधेनु कहा गया है। आत्मसत्ता में सन्निहित इस महाशक्ति का परिचय कराते हुए योगशास्त्रों में इसकी महिमा एवं गरिमा का उल्लेख किया गया है। यह एक प्रचण्ड विश्वव्यापी शक्ति है, जिसे उपयुक्त सत्पात्र अपनी साधना - प्रक्रिया द्वारा आकर्षित करके अपनी आत्मिक और भौतिक मौलिक संपदा में अभिवृद्धि करते हैं। हमारे मस्तिष्क मध्य केन्द्र में ब्रह्मरन्ध्र विद्यमान है। इसी स्थान को सहस्रार चक्र कहते हैं। ब्रह्माण्डिय चेतना-प्रकृति का शरीर का क्षेत्र मूलाधार चक्र है। शक्तियों के निक्रिय बने रहने पर केवल उनकी उपस्थिति का आभास मात्र ही होता है। जब उन दोनों शक्तियों का मिलन मेरुदण्ड स्थित देवयान मार्ग से होता है। तो अनन्त शक्ति की एक ऐसी धारा प्रवाहित हो उठती है जिसे आश्चर्य ही कह सकते है। अर्थात् मानवीय चेतना को ब्रह्माण्डिय चेतना से जोड़ती है। यही परमपद, जीवनमुक्त अथवा ब्राह्मीस्थिति है।

 Copyright © 2020Authors

हठप्रदीपिका में कुण्डलिनी की महत्त्व का वर्णन करते हुए कहा गया है- 'जिस प्रकार सम्पूर्ण वनों सहित जितनी भूमि है, उस का आधार सर्पों का नायक (शेषनाग) है, उसी प्रकार समस्त योग साधनाओं का आधार भी कुण्डलिनी है।[4] जब गुरू की कृपा से सोयी हुई कुण्डलिनी जागती है, तब सम्पूर्ण पद्म (षटचक्र) और ग्रन्थियाँ खुल जाती है, और उसी समय प्राण की शून्य पदवी (सुषुम्ना), राजपथ के समान हो जाती है, चित्त विषयों से रहित हो जाता है और मृत्यु का भय मिट जाता है।'[5] तांत्रिक क्षेत्र में कुण्डलिनी की साधना 'कुण्डलिनी योग' के नाम से प्रसिद्ध है।

कुण्डलिनी का स्वरुप

कुण्डलिनी शब्द की व्युत्पत्ति संस्कृत के 'कुण्डल' या 'कुण्ड' शब्द से हुई है। कुण्डल का अर्थ है- 'घेरा बनाए हुए' या 'कुण्डलीकृत' होता है, वह कुण्डलिनी है। 'कुण्ड' का अर्थ है - गुहर, विवर, कोई गहरा स्थान, छेद या गड्ढा। अर्थात जो कुण्ड में निवास करती है, वह कुण्डलिनी है। कुण्डलिनी के इन दोनों अर्थो का उल्लेख मिलता है - *'भुजगनिभमध्युष्ठवलयं*[6] तथा *'स्वपिषि कुलकुण्डे कुहरिणि'*[6] अर्थात् सर्प की भांति साढ़े तीन कुण्डल (वलय) बनाकर तुम हे कुहरिणि, कुलकुण्ड में शयन करती हो। योगियों के अनुसार, कुण्डलिनी शब्द का तात्पर्य उस शक्ति से है, जो गुप्त एवं निष्क्रिय अवस्था में हैं, किन्तु उस शक्ति के जाग्रत होने पर उसे अपनी अनुभूति के आधार पर ही महाकाली, महालक्ष्मी एवं महासरस्वती अथवा अन्य किसी भी नाम से जाना जाता है।[7]

कुण्डलिनी चिन्मयी, ज्ञान स्वरुपा एक शक्ति का नाम है जिसे योग शास्त्रों में साढ़े तीन फेरे कुण्डल डाले सर्पिणी के रूप में अलंकारिक वर्णन मिलता है। इसके तीन कुण्डल-इच्छा, ज्ञान और क्रिया शक्ति की तीन धारायें हैं। पश्यन्ती, मध्यमा और बैखरी प्राणियों के तीन पूरे एवं परा का आधा कुण्डल मिलाकर साढ़े तीन लपेट कहे गये हैं। इसी प्रकार आत्मा की तीन अवस्थाएं - जाग्रत, स्वप्न और सुषुप्ति या विश्व, तेजस् और प्राज्ञ तीन अवस्थाएं, ऊँकार की अकार, उकार और मकार तीनों मात्राएं, प्रकृति की शक्तियों को सत, रज और तम तीन गुणों वाली होने से इन्हें कुण्डलिनी की तीन कुण्डल कहा जाता है।

कुण्डलिनी शक्ति की तुलना विद्युत ऊर्जा से की गयी है। *'तड़िल्लता समरुर्चिविद्युल्लेखा भास्वरा'* इस सूत्र में उसे बिजली की लता रेखा जैसा ज्योर्तिमय बताया है। इसी प्रकार एक अन्य स्थान पर

 Copyright © 2020Authors

'तडिल्लेखा तन्वी तपनशर्शि वैश्वानरमयी' अर्थात उसे प्रचण्ड अग्निशिखा एवं दिव्य वैश्वानर अग्नि की उपमा दी गयी है।

पृथक-पृथक शास्त्रों, ग्रंथों एवं साधना मार्ग में इसे भिन्न-भिन्न नामों से सम्बोधित किया है। हठयोग के प्रसिद्ध ग्रंथ हठप्रदीपिका में इसके लिए कुटिलाङ्गी, कुण्डलिनी, भुजङ्गी, शक्ति, ईश्वरी, कुण्डली, अरुन्धती इन सात पर्यायवाची नामों का उल्लेख किया गया है।[8] जबकि हठरत्नावली में फणी, कुण्डलिनी, नागी, चक्री, सरस्वती, ललना, रसना, सर्पिणी, मणि, आधारशक्ति, कुटिला, कराली, प्राणवाहिनी, अष्टावक्र, षडाधारा, व्यापिनी, कलनोधरा और कुन्ती नाम का उल्लेख है।[9] भक्ति ग्रंथों की 'आह्लादिनी शक्ति', वेदान्त की 'योगमाया', 'आद्यशक्ति' या 'आत्मसत्ता' तथा तंत्र में कुल कुण्डलिनी इस कुण्डलिनी शक्ति के ही पर्याय हैं। श्वेताश्वतर उपनिषद में कुण्डलिनी शक्ति को 'योगाग्नि' बताया गया है[10] और इसकी तुलना पवित्र यज्ञाग्नि से की गई है। समष्टि रूप में यह पराकुण्डलिनी, महाकुण्डलिनी, महाशक्ति, अव्यक्ता, कुण्डलिनी आदि नामों से पुकारी जाती है तथा व्यष्टि में यह मूलतः 'कुण्डलिनी' कहलाती है। इसे आधारशक्ति भी कहते हैं। आधुनिक मनोविज्ञान की शब्दावली में इसे अचेतन मन की प्रसुप्त शक्ति कहा जा सकता है। चैनिक योगप्रदीपिका में इसे 'स्पिरिट फायर' कहा गया है और आत्मा की ज्वलन्त अग्नि के रूप में उसकी विवेचना की है। प्रसिद्ध पाश्चात्य योगविद्या विशारद, तंत्रान्वेषी सर जॉन वुडरफ ने इसे 'सर्पेन्ट पॉवर' के नाम से संबोधित किया है है।[11] आचार्य श्रीराम शर्मा के शब्दों में यह 'जीवन ऊर्जा' या 'जीवन अग्नि' है,[12] जो सामान्य क्रम में सुप्त अथवा अर्द्धचेतन अवस्था में रहती है। तान्त्रिक ग्रन्थों में कुण्डलिनी को 'आदिशक्ति' माना गया है। पुराणों में कुण्डलिनी की तुलना 'काली' से की जाती है। शैव दर्शन में कुण्डलिनी को चारों तरफ से सर्प से लिपटे शिवलिंग के माध्यम से प्रकट किया जाता है। चीन में 'ची-शक्ति', जापान में 'की-शक्ति' एवं अफ्रीका मे 'नऊँम' कुण्डलिनी को ही कहते है। महायोग विज्ञान में इसे 'आत्मशक्ति' के रूप में निरूपित किया गया है।[13] योगवशिष्ठ में इसे प्राणियों की 'परमशक्ति' बताया है।[14] हठप्रदीपिका में कुण्डलिनी को 'बालरण्डा तपस्विनी' नाम से भी संबोधित किया गया है।[15] क्योंकि वह आज्ञाचक्र स्थित शिव से वियुक्त होकर योनिमण्डल में विरह अवस्था में पड़ी हुई रहती है और शिव से पुनर्मिलन के लिए तब तक तपस्या करती रहती है जब तक कि वह शिव को प्राप्त नही कर लेती है। योगबीज में इसे 'त्रैलोक्य मोहिनी' तथा 'जीवशक्ति' कहा गया है।[16]

 Copyright © 2020Authors

शरीर विज्ञान इसे सूक्ष्म संस्थान में स्थित एक 'विद्युत् शक्ति' का प्रवाह कहता है। वह कुण्डलिनी सम्पूर्ण जगत की कारणरूपा और निर्माण करने वाली कही गयी है।[17]

कुण्डलिनी शक्ति अतिसूक्ष्म विद्युत के समान प्रकाश रूप और जीवात्मा का आधारभूत है, मूल प्रकृति स्वरूप है और सर्व प्राणिधारी जीवों के शरीर में रहती है।[18] थियोसोफिकल सोसायटी की जन्मदात्री मैडम ब्लैवट्स्की ने इसे विश्वव्यापी वैद्युतीय शक्ति 'कॉस्मिक इलैक्ट्रिसिटी' कहा है और इसकी गति को ३,४५,००० मिली प्रति सेकण्ड बताया है। ईसाई परंपरा के ग्रन्थ बाइबिल में 'साधकों का पथ' अथवा 'स्वर्ग का रास्ता' नाम से कुण्डलिनी शक्ति के जागरण को ही बताया गया है।[19] जैन योगाचार्यो ने कुण्डलिनी शक्ति को 'तेजोलेश्या' के रूप में वर्णित किया और इसका उद्गम स्रोत सूक्ष्म शरीर को बताया है।[20] यह स्वर्ण समान आभा वाली महाशक्ति कुण्डलिनी निर्भयता प्रदान करने वाली है। यह वैष्णवी है। सत, रज, तम तत्वों को उत्पन्न करने वाली है।[21] मूलाधार के मध्य में आत्मतेज रूप अग्निपुंज होकर विराजमान है। जीवनीशक्ति वही है। तेजस्वी प्राण ही उसका आकार है। परब्रह्ममय है। इसकी अनेक आकृतियाँ है। इन शुभकामनाओं को पूर्ण करने वाली शक्ति का नाम कुण्डलिनी है।[22]

स्वामी विवेकानन्द कहते हैं कि वह केन्द्र जहाँ समस्त अवशिष्ट संवेदनाएँ या संस्कार संचित, संग्रहित है, मूलाधार चक्र कहलाता है। वहाँ कुण्डलीकृत क्रियाशक्ति (चाइल्ड अप एनर्जी ऑफ एक्शन्स) को कुण्डलिनी शक्ति कहा जाता है।[23] आर्थर एलवन के अनुसार- जो महत् ब्रह्मसत्ता (A Geart Cosmic Power) ब्रह्माण्ड का सृजन एवं धारण करती है उसकी व्यक्ति देह में अवस्थित प्रतिनिधि सत्ता का नाम कुण्डलिनी शक्ति है।[24]

षट्चक्रनिरूपणम् में उल्लेख है कि निरन्तर अमृत के संयोग से कुण्डलिनी महाशक्ति का मुख मधुर है। अतएव वह शंख विष्टनाकार सदृश है। वह नूतन विद्युतलेखा के समान है। वह स्वयंभू लिंग पर सुषुप्तावस्था में साढ़े तीन वृत्ताकार (कुण्डलाकार) होकर स्थित होने से कुण्डलाकार स्वरूप वाली है और इसीलिए उसका नाम कुण्डलिनी है।[25] शारदातिलक के अनुसार योगियों के हृदय कमल में नित्य ही नृत्य करने वाली तथा समस्त जीवों के मूलाधार में विद्युत् के समान आकृति वाली स्फुरण करती हुई शंख के आवर्त के क्रम यह शक्ति सबको आवृत्त करके अवस्थित है। यह कुण्डली-भूत सर्पों की अङ्गश्री को प्राप्त करने वाली है। यह सब देवों तथा मंत्रों से पूर्ण शिवा है। यह सब तत्त्वों से परिपूर्ण, साक्षात्, सूक्ष्म से भी सूक्ष्मतर और व्यापक है। ब्रह्मरूप है। यह समस्त वर्णात्मिका है। यह परदेवता है। यह मंत्रमय जगत को प्रसूत करने वाली है।[26]

 Copyright © 2020Authors

ISSN 2454-2695
Vol 6 Issue 10 October 2020

शास्त्रकारों एवं तत्त्वदर्शियों ने इस संबंध में अपने-अपने अनुभव के आधार पर कई मत व्यक्त किये हैं। ज्ञानार्णव तंत्र में कुंडलिनी को विश्वजननी और सृष्टि संचालिनी शक्ति कहा गया है।[27] विश्व व्यापार एक घुमावदार उपक्रम के साथ चलता है। परमाणु से लेकर ग्रह-नक्षत्रों और आकाशगंगाओं तक की स्थिति परिभ्रमण परक है। आत्मचेतना का परिभ्रमण भी कुछ इसी प्रकार का है। कुण्डलिनी इसी परिभ्रमण के माध्यम से आत्मचेतना की पूर्णता का पथ प्रशस्त करती है। योगियों ने इसे 'वाइस ऑफ साइलेन्स' मौन की भाषा कहा है।[28]

तंत्रशास्त्र में कुण्डलिनी को एक पारिभाषिक शब्द माना गया है। जिसका अर्थ 'शब्द-ब्रह्म' या 'परावाक् शक्ति' है। सभी मन्त्र, देवता कुण्डलिनी की अभिव्यक्ति है । मंत्र में प्रयुक्त मातृकाओं (वर्णों) से ही विश्व सृष्टि होती है, वही नाद शक्ति और सर्वशक्ति सम्पन्न कला तथा परमेश्वरी है। वही निर्गुण ब्रह्म से प्रवाहमान अमृत स्रोत रूप है, वही ब्रह्म है, चित्शक्ति वर्णों और शब्दों के रूप में प्रकट होती है। मातृकायें ही शाश्वत् ब्रह्म का यन्त्र हैं। उनकी शक्ति जब मंत्रशक्ति से मिलती है तब साधक शक्ति का साक्षात्कार कर पाता है। इसी शक्ति का सूक्ष्म रूप कुण्डलिनी है। उसका स्थूल रूप देवता का रूप है। कुण्डलिनी को 'अष्टप्रकृति-स्वरूपा' कहा गया है।[29]

शास्त्रज्ञों ने ही नही वरन् विज्ञानियों ने भी इसकी विभिन्न रूपों में विवेचना की है। शरीर विज्ञानियों ने उसे नाड़ी संस्थान से उद्‌भूत 'नर्वस फोर्स' कहा है। डॉ. रेले ने अपने बहुचर्चित ग्रंथ 'मिस्टीरियस कुण्डलिनी' में उसकी वेगस नर्व के रूप में व्याख्या की है। उनके मतानुसार माँसपेशियों और नाड़ी संस्थान के संचालन में प्रयुक्त सामर्थ्य आध्यात्मिक प्रयोजनों की ओर कार्यरत होने पर कुण्डलिनी कहलाती है। और इस शक्ति के नियंत्रण से ऐच्छिक और अनैच्छिक गतिविधियों पर इच्छानुसार नियंत्रण प्राप्त किया जा सकता है।[30] डॉ. हेनरी लिण्डाल का मानना है कि ब्रह्माण्डव्यापी चेतन विद्युत चुम्बकीय धाराओं का व्यष्टिगत अंश कुण्डलिनी शक्ति के रूप में मेरूदण्ड में विराजमान होता है। इसका उद्गम स्रोत मेरूदण्ड के निचले भाग पर स्थित कॉडा इक्काइना और मेरूदण्ड के ऊपरी सिरे पर स्थित मस्तिष्कीय ग्रेमैटर दोनों होते हैं।[31] डॉ. स्कॉट ने कहा है कि यह 'क्रिस्टल' है जिसके सहारे जीवन रूपी ट्रांजिस्टर अपनी ध्वनि बजाता है। शरीर शास्त्री अपने ढंग से व्याख्या करते हुए उसे स्पाइनल कार्ड तथा मूलाधार को 'गैंग्लियान इन्पार' के रूप में निरूपित करते हैं जो असाधारण शक्ति का केन्द्र है। तंत्र साधना सार में कुण्डलिनी को विद्युत के समान भास्कर कहा गया है। मधुमक्खियों के गुंजार की ध्वनि के समान इसकी ध्वनि है। यह श्वास-

Copyright © 2020Authors

प्रश्वास रूप होने के कारण सभी जीवों की जीवनदात्री है। वह समस्त मातृकाओं की जननी होने से मन्त्रों की अधिष्ठात्री है, वह सूर्य, चन्द्र, अग्नि रूप में है तथा तीनों का कारण भी है।[32]

महाशक्ति कुण्डलिनी उस परमेश्वर की ही चेतना शक्ति है। पिण्ड में उस शक्ति का स्थान शास्त्रों द्वारा स्वीकृत मूलाधार चक्र में है। यहाँ स्थित यह शक्ति ही इस पिण्ड का मूल आधार है। शरीर के जिस चक्र में कुण्डलिनी शक्ति का निवास है, उसकी स्थिति के सन्दर्भ में कहा गया है- यह मूलाधार चक्र लिंग मूल से नीचे और गुदा द्वार से ऊपर (दोनों के बीच-ध्वजोऽधोगुदोर्ध्वम्) स्थित है।[33] इसका क्षेत्र चार अंगुल माना गया है।[34] यह स्थान कन्द और सुषुम्ना का संधिस्थल है। (कन्दसुषुम्णयोः सन्धिस्थानं संलग्रपत्रम्)।[35] कुण्डलिनी कन्द या कन्दयोनि स्थान पर सुषुप्तावस्था में रहती है। हठप्रदीपिका के अनुसार मूलस्थान से एक बलिस्त ऊपर नाभि और लिंग के मध्य चार अंगुल वाला कन्द स्थान है, यह स्थान कोमल है, शुभ्र है, मानो किसी वस्त्र से आवृत्त हो।[36] मण्डल ब्राह्मणोपनिषद् में ऋषि कहते हैं- सूक्ष्म कुण्डलिनी शक्ति सुषुम्ना नाड़ी के साथ कमल तन्तु के समान बंधी हुई है। यह नाड़ी मूलाधार से ब्रह्मरन्ध्र तक सूर्य के प्रकाश जैसी फैली हुई है।[37]

गुदा से दो अंगुल उपर तथा जननेन्द्रिय से एक अंगुल नीचे चार अंगुल परिधि वाला एक समकोण कन्द है। गुदा एवं जननेन्द्रिय के बीच में पीछे की ओर मुख किये हुए योनि स्थान है उसी में कन्द की स्थिति कही गयी है तथा उसी कन्द में कुण्डलिनी का वास करती है। समस्त नाड़ियों को घेरकर साढ़े तीन फेरे लगाकर कुटिल आकृति वाली वह पूंछ को मुख में डालकर सुषुम्णा के विवर मे स्थित रहती है।[38] अन्यत्र कुण्डलिनी के बारे कहा गया है कि कन्द के ऊपर कुण्डलिनी नाम की शक्ति आठ कुण्डली लगाकर तथा सर्वदा सुषुम्ना के प्रवेश द्वार को अपने मुख से बन्द कर पड़ी हुई है।[39]

कुण्डलिनी जागरण की विधियाँ

मानवीय चेतना के सामान्य स्तर पर कुण्डलिनी शक्ति सुषुम्ना छिद्र या ब्रह्ममार्ग को बन्द किये हुए स्थित रहती है। यह इसकी सुप्तावस्था है। इस स्थिति में जीव स्थूल शरीर तक ही सीमित रहता है। वह वासनाओं, कामनाओं व इच्छाओं में लिप्त रहता है और फलतः जन्म-मृत्यु के चक्रव्यूह में, संसार चक्र में भ्रमण करता रहता है। ऐसी स्थिति में प्राण केवल इड़ा और पिंगला से होकर ही बहता है। उसकी समस्त शक्तियाँ सोयी रहती हैं, परन्तु यह एक सत्य और तथ्य है कि मानवीय चेतना अपने पुरुषार्थ से इन सुप्तशक्तियों को जाग्रत करने की क्षमता रखती है, उसे परमात्मा ने यह सामर्थ्य प्रदान की है कि वह अपनी सीमित शक्तियों को जागृत करके असीमित, अनन्त शक्तियों का स्वामी बन सकता है, तथा कुण्डलिनी जागरण की प्रक्रिया द्वारा अपनी व्यक्तिगत चेतना को ब्रह्माण्डीय चेतना से सायुज्य कर सकता है। इस स्थिति में मानव चेतना

 Copyright © 2020Authors

परमात्म चेतना के सम्पर्क, सानिध्य में होती है। स्वात्मारामजी ने इसी संदर्भ में उल्लेख किया गया है कि जिस प्रकार चाबी से द्वार खुल जाते हैं, ठीक उसी प्रकार से योगी हठयोग के द्वारा कुण्डलिनी को जगाकर मोक्षद्वार (सुषुम्ना छिद्ररूपी ब्रह्ममार्ग) खोलते हैं।[40]

कुण्डलिनी महाशक्ति का जागरण, साधना के विभिन्न सोपानों के निरन्तर अभ्यास तथा सद्‌गुरु की कृपा पर अवलम्बित है,[41] तथा नाड़ियों की गति व कुण्डलिनी का स्थान भलिभांति जानने के पश्चात कुण्डलिनी का जागरण करना चाहिए।[42] योगकुण्डल्युपनिषद् में कुण्डलिनी शक्ति को जगाने के लिए दो मुख्य उपाय अथवा साधना बतायी गई है- *प्रथम - सरस्वती चालन और द्वितीय - प्राणायाम के अभ्यास से प्राण का निरोध करना।* इन दोनों के अभ्यास से कुण्डलिनी शक्ति एकाएक सीधी होकर सुषुम्ना में प्रवेश के लिए तैयार हो जाती है।[43]

आसन, प्राणायाम, मुद्रा के अभ्यास दृढ़ होने पर सुषुम्ना कुण्डलिनी जागरण के लिए उपयुक्त होती है।[44] हठयोग में कुण्डलिनी जागरण के लिए अनेक आसनों में से सिद्धासन को सबसे अधिक उपयोगी माना गया है,[45] साथ ही मत्स्येन्द्रासन कुण्डलिनी जागरण करने में सहायक होता है।[46] पश्चिमोत्तानासन से प्राण का प्रवाह सुषुम्ना में होता है।[47] हठयोग में जिन साधकों में स्थूलता और कफ की अधिकता हो उन्हें षटकर्म करने का निर्देश दिया गया है।[48] साधक इन षटकर्मों- धौति, नेति, बस्ति, नौलि, त्राटक और कपालभाति को सम्पन्न करके शरीर का शुद्धिकरण तथा हल्का करते हैं।

शोधन के बाद प्राणायाम का अभ्यास अनिवार्य है। इसका अभ्यास ही कुण्डलिनी जागरण की मुख्य भूमिका का निर्वाह करता है। प्राणायाम के निरन्तर अभ्यास से जब नाड़ी समूह की शुद्धि हो जाती है, और कुण्डलिनी का जागरण होता है, तब प्राण सुषुम्ना में प्रवेश करती है।[49] सूर्यभेदन प्राणायाम से ब्रह्मनाड़ी के मुखद्वार से कफ को दूर करता है,[50] और इससे कुण्डलिनी का जागरण होता है।[51] योगरसायन शास्त्र[52] में भस्त्रिका कुम्भक से कुण्डलिनी जागरण की बात कही है, तथा निर्देशित किया है कि जिस समय कुम्भक की मात्रा पाँच सौ से अधिक हो जावे उस काल में कुम्भक को कुण्डलिनी जगाने में योग्य समझना चाहिए। भस्त्रिका के अभ्यास से सुषुम्ना के मुख में जमे हुए कफ आदि बाधाओं का निवारण होता है।[53] जिससे हितकारी और सुखदायी पवन (प्राण) शीघ्र कुण्डली जागरण करती है। तथा शरीरगत तीनों ग्रन्थियों का भेदन करता है।[54]

हठयोग के साधकों ने प्राणायाम के साथ बंध की भी अपरिहार्यता स्वीकार किया है। बंध के तीन भेद बताये गये हैं - मूलबंध, उड्डीयान बंध और जालन्धर बंध। लगभग सभी हठयोग ग्रन्थों व योगोपनिषदों में

 Copyright © 2020Authors

कुण्डलिनी जागरण हेतु त्रिबन्ध की महत्ता हेयभूत माना गया है,[55] और कहा गया कि त्रिबंध योगाभ्यास में योगियों के उपकारक है, जो कुण्डलिनी को बोधन करके प्राणों को ब्रह्मरन्ध्र में पहुंचाते हैं।[56] त्रिबन्धों के ज्ञानोपरान्त कुण्डलिनी जागरण से षट्चक्रों व सभी ग्रंथियों का भेदन होता है।[57] श्रीनिवास भट्ट जी के अनुसार ये तीनों बन्ध महासिद्धों द्वारा सेवित तथा सभी योग क्रियाओं के साधन स्वरुप योगियों द्वारा श्रेष्ठ बताये गये है। आधार (मूलबन्ध), कण्ठ (जालन्धर बन्ध), और मध्यभाग का संकुचन (उड्डियान बन्ध) के अभ्यास से प्राण ब्रह्मनाड़ी में प्रवेश करता है।[58]

त्रिबन्धादि[59] के अभ्यास से प्राण और अपान में घर्षण से शरीर के मध्य भाग में स्थित अग्नि की वृद्धि होती है।[60] उस अग्नि के ताप से तथा प्राणों के संघर्षण से जैसे दण्डे से आहत सर्पिणी कुण्डल छोड़कर सीधी हो जाती है वैसे ही कुण्डलिनी निद्रा त्यागकर सीधी हो जाती है।[61] जागृत कुण्डलिनी ब्रह्मरंध्र के मार्ग को त्यागकर अपने साथ प्रजीव को लेकर सुषुम्ना (ब्रह्मनाड़ी) में प्रविष्ट जाती है।[62] जिससे ऊपर की ओर प्राणों का उर्ध्वगमन होता है।[63]

हठयोग के ग्रन्थों में महामुद्रा, महाबन्ध और महावेध की कुण्डलिनी जागरण में भूमिका को स्पष्ट करते हुए उल्लेख हैं कि जिस प्रकार डण्डे की मार खाकर साँप डण्डे के समान सीधा हो जाता है उसी प्रकार कुण्डलिनी महामुद्रा के अभ्यास से सहसा सीधी (जागृत) हो जाती है।[64] महाबन्ध कालपाश रुपी महाबन्धन को दूर करने में समर्थ है, इसके अभ्यास से त्रिवेणी इड़ा, पिंगला और सुषुम्ना का संगम होता है तब मन केदार (भृकुटी मध्य जिसे शिव स्थान कहते हैं) में पहुँच जाता है।[65] महावेध के अभ्यास से प्राण दोनों पुटों (इड़ा और पिंगला) को छोड़कर सुषुम्ना में गतिशील होता है।[66] मूलबन्ध के द्वारा प्राण और अपान तथा नाद और बिन्दू जब एक हो जाते है, तब योग में सफलता मिलती है।[67]

हठप्रदीपिका में सुषुम्ना के मूल में सोती हुई कुण्डली को जगाने के लिए मुद्राओं के अभ्यास करने के लिये निर्देश किया है।[68] घेरण्ड संहिता में योनि मुद्रा,[69] वज्रोणि,[70] अश्विनी मुद्रा,[71] पाशिनी मुद्रा[72] तथा शक्तिचालिनी मुद्रा[73] के द्वारा कुण्डलिनी का जागरण करके जीवात्मा सहित उसे सुषुम्ना मार्ग से सहस्रार में पहुँचाने की विधि बताई गयी है।[74] महामुद्रा से कुण्डलिनी शीघ्र सीधी होकर उर्ध्व गामी बनती है।[75] हठरत्नावली में कहा गया है कि वज्रोलि कर्म से कुण्डलिनी जाग्रत होती है, नाड़ियों की शुद्धि होती है, एवं प्राण-अपान की एकता होती है।[76] खेचरी मुद्रा शीघ्रता से प्राण का प्रवेश ब्रह्मरन्ध्र में कराती है।[77]

ध्यान के विषय में कहा गया है कि जिसकाल में आधारादि चक्रों का भेदन कर प्राणवायु मूर्धा में पहुंच जाये तो साधक को ब्रह्मरन्ध्र में चन्द्रमंडल[78] या अक्षय ऊँकार ध्यान[79] करना चाहिए। ध्यानबिन्दु

 Copyright © 2020Authors

उपनिषद में उल्लेख है कि अच्छी तरह से पद्मासन लगाकर हाथों को संपुटित करके छाती पर चिबुक को दृढ़ता से स्थापित कर चित्त में आत्म स्वरूप का ध्यान करना चाहिए। ध्यान करते समय बार-बार नीचे की ओर प्रवाहित अपान वायु को ऊपर की ओर प्रवाहित करना चाहिए। इस प्रकार अभ्यास करने वाला योगी उस कुण्डलिनी शक्ति के प्रभाव से अतुलनीय बोध को प्राप्त कर सकता है।[80] सौभाग्य लक्ष्युपनिषद्[81] के अनुसार 'मूलाधार में योनि के आकार का तीन घेरे वाला ब्रह्मचक्र है। वहाँ सुप्त सर्पिणी की तरह, कुण्डलिनी शक्ति का निवास है। जब तक वह जाग्रत् न हो, तब तक उस स्थान पर प्रचण्ड अग्नि की धधकती हुई ज्वाला का ध्यान करें। प्रातःकाल के अरूण सूर्य के समान आभावती बिजली की तरह चमकती हुई, इस कुण्डलिनी को ध्यान द्वारा जाग्रत करते हैं। जाग्रत होने पर यह अनन्त सामर्थ्यवान बना देती है और समस्त सिद्धियाँ प्रदान करती हैं।'

कुण्डलिनी अपने पूंछ को मुंह में डालकर सुषुम्ना के द्वार को ढंककर सोयी हुई है। इसके जागरण के लिए पद्मासन में बैठकर गुदा को उपर की ओर खींचकर, कुम्भक करके वायु को उपर की ओर ले जाकर वायु के आघात से स्वाधिष्ठान में स्थित अग्नि को प्रज्वलित कर देना चाहिए। ऐसा करने से अग्नि और वायु के आघात से सोयी हुई कुण्डलिनी जाग्रत होकर ब्रह्मा, विष्णु तथा रुद्र ग्रंथियों का भेदन करके छहों चक्रों का भेदन करती हुई सहस्रार कमल तक पहुंच जाती है, और वहां वह शक्ति शिव के साथ आनन्द प्राप्त करती है। यह अवस्था परमानन्द मुक्तिदायक होती है।[82]

तन्त्र में कुण्डलिनी जागरण का मार्ग हठयोग से भिन्न प्रकार बताया गया है। रुद्रयामल (उत्तरतंत्र) में कुण्डलिनी-प्रबोधन (जागरण) के लिए स्तोत्र, ध्यान, न्यास, मंत्र, कवच, और सहस्रनाम आदि का वर्णन हुआ है।[83] कुण्डलिनी साधना का सरलतम उपाय है - गायत्री महामंत्र का नियमित जप। उपनिषद के ऋषि कहते हैं कि अजपा गायत्री योगियों के लिए मुक्ति देने वाली है। इसके संकल्प मात्र से सर्वपापों से मुक्ति मिल जाती है। इसके समान कोई विद्या, जप, ज्ञान, अभी तक न हुआ है और न भविष्य में होगा। यह गायत्री कुण्डलिनी से उत्पन्न हुई है, यह प्राणों को धारण करने वाली है, यह प्राणविद्या और महाविद्या है, इसप्रकार इसे जो जान लेता है, वह वेद को सही रूप से जानता है।[84] यह एक बहुत शक्तिशाली, सरल एवं निरापद मार्ग है। परन्तु इसमें अपेक्षाकृत समय तथा धैर्य की आवश्यकता होती है। जिस प्रकार किसी शान्त झील में कंकड़ फेंकने पर उसमें तरंगे उत्पन्न होती हैं, उसी प्रकार मंत्र को बार-बार दोहराने से मन रूपी समुद्र में तरंगे

 Copyright © 2020Authors

उत्पन्न होती हैं। लाखों-करोड़ों बार गायत्री मंत्र के जप से अस्तित्व का कोना-कोना झंकृत हो जाता है। इससे अपने शारीरिक, मानसिक एवं आध्यात्मिक तीनों स्तरों की शुद्धि हो जाती है।

इसी प्रकार अलग-अलग ग्रन्थों में भिन्न-भिन्न विधियों का वर्णन प्राप्त होता है। इनके अध्ययन के सार निष्कर्ष के रूप में यह कहा जा सकता है कि मंत्र, जप, तप, स्वाध्याय, चिंतन, अन्वेषण, श्रद्धा-भक्ति पूर्ण भजन-कीर्तन, निष्काम कर्म, तीव्र संवेग, प्राणायाम, बन्ध-मुद्रा आदि साधनों के अभ्यास से कुण्डलिनी जाग्रत की जा सकती है। ये सभी बाह्य साधन हैं, इनके साथ-साथ ध्यान अत्यावश्यक है। परन्तु इनमें सर्वोपरि स्थान, ईश्वर तथा सद्गुरु की कृपा का है। इसके साथ ही यह भी स्मरण रखने योग्य तथ्य है कि कुण्डलिनी जागरण के समस्त उपाय तभी लाभप्रद होते हैं, जबकि साधक सत्पात्र हो। ईश्वर व गुरु की कृपा भी पात्र को ही प्राप्त होती है।

कुण्डलिनी जागरण की उपलब्धियाँ

मानवीय काया में स्थित कुंडलिनी शक्ति जागृत होने पर व्यक्ति का समष्टिगत दिव्य चेतना से संबंध जुड़ जाता है इसीलिए कुंडलिनी जागरण को आध्यात्मिक पथ का प्रवेश द्वार कहा जाता है। शरीरगत इस कुण्डलिनी शक्ति का सामान्य प्रवाह निष्क्रिय पड़ा रहता है, परन्तु इसे साधना द्वारा जागृत करके मानव चेतना में आमूल-चूल परिवर्तन या व्यक्तित्व का संपूर्णतया रूपांतरण किया जाता है। विभिन्न अध्यात्म ग्रन्थों में कुण्डलिनी की सामर्थ्य का अत्यन्त विस्तृत विवेचन उपलब्ध होता है। त्रिपुरा तंत्र में कहा गया है- 'जो देवता भोग देते हैं वे मोक्ष नही देते। जो मोक्ष देते हैं वे भोग नहीं देते। किन्तु कुण्डलिनी दोनों को ही प्रदान करती है। महायोग विज्ञान में लिखा है कि जिसकी कुण्डलिनी शक्ति सो रही है उसका सारा संसार सो रहा है जिसकी कुण्डलिनी जगी, समझना चाहिए कि उसका भाग्य जग गया। जब यह कुण्डली अपने स्थान से उपर जाती है, तब वह कुण्डलिनी शक्ति योगियों के लिए मुक्तिरुप होती है। और अपने स्थान को नही छोड़ने वाली यह मूढ़ों की कुण्डलिनी बन्धन कारक ही होती है, ऐसा जो जानता है, वह योगवित् कहा जाता है।[85]

स्वात्माराम जी कहते है कि जिस मार्ग से क्लेशरहित ब्रह्मपद को जाया जाता है उस मार्ग को मुख से ढककर कुण्डलिनी सोयी हुई है। कन्द के ऊपर भाग में सोती हुई कुण्डलिनी योगियों के मोक्ष के लिए होती है। किन्तु मूढ़ लोगों के लिये वही बन्धन का कारण बनती है। कुण्डली सर्प के समान टेढ़ी मेढ़ी आकार वाली बतायी गयी है। उस कुण्डली शक्ति को जिसने जागृत कर लिया वह मुक्त है।[86]

 Copyright © 2020Authors

षटचक्रनिरुपण[67] में कुण्डलिनी ध्यान के संदर्भ में कहा गया है कि कुण्डलिनी अर्थात् सर्पिणी जिनकी आभा करोड़ों सूर्यों के प्रकाश के भांति है, का जो नर ध्यान करता है, वह उन्हीं के समान हो जाता है। क्रम से उसे वाक्सिद्धि प्राप्त होती है। उसकी वाणी माधुर्य और रस से ओतप्रोत रहती है। मनुष्यों में वह इन्द्र सदृश तथा सहसा सर्वविद्याओं का विनोदी हो जाता है। सदैव निरोगी और स्वस्थ रहता है। उसकी अन्तरात्मा रात-दिन ईश्वर के महानन्द में निमग्न रहती है। वह व्यक्ति काव्य प्रबन्धन में पटु माना जाता है। शब्दों का नियामक होने के कारण वह सम्मान पाता है। शुद्धशील होने से वह देवों के प्रिय बन जाता है।

जो योगी अन्तकाल में ब्रह्मरन्ध्र मार्ग से प्राणों को त्यागता है तो वह जन्ममरण रूप संसार बंधन से मुक्त हो जाता है।[88] वह ब्रह्मस्वरुप हो जाता है।[89] जिस समय प्राण मूर्धा में पहुंचता है तो योगी को अनाहत नाद सुनायी देता है और मुख में तालु से अमृत टपकता है।[90] योगी को परमानन्द की अनुभूति होती है।जिस आनन्द का समाधिकाल में योगी लोग अनुभव करते है।[91]

निष्कर्ष

वस्तुतः कुण्डलिनी शक्ति वही पराशक्ति है। जिसका वर्णन विभिन्न मतमतान्तरों में अन्य-अन्य नामों से अभिहित किया गया है। अतः व्यष्टिगत मानव चेतना की समूची क्रियाशीलता एवं विकास का आधार कुण्डलिनी ही है और केवल व्यष्टिगत सत्ता एवं विकास नही वरन् समष्टिगत रूप से संपूर्ण विश्व-ब्रह्माण्डीय क्रिया-कलाप भी इसी महाशक्ति पर आश्रित है।

कुण्डलिनी शक्ति को फायर आफ लाइफ के रूप में ही प्रतिपादित किया गया है। उसकी अभिवृद्धि जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में विभिन्न प्रकार से परिलक्षित होती है। शरीर क्षेत्र में उसके समर्थ आरोग्य के रूप में, मन में संतुलित विवेकशीलता के रूप में उसे देखा जा सकता है । काय कलेवर में वह बलिष्ठता, निरोगिता, स्फुर्ति, क्रियाशीलता, उत्साह, तत्परता के रूप में दिखायी देती है। मस्तिष्क में उसका परिचय तीव्र बुद्धि, दूरदर्शिता, स्मरण शक्ति, सुझबुझ, कल्पना, निर्णय क्षमता, कुशलता, व्यवस्था आदि के रूप में देखा जा सकता है। भावना क्षेत्र में वही श्रद्धा, निष्ठा, आस्थाभाव, संवेदना, करुणा, आत्मीयता, सौंदर्यानुभूति के रूप में उभरती है। सब मिलाकर उसे उच्च स्तरीय उत्कृष्टता की दिशा में जीव चेतना को अग्रसर कराते हैं।

इस प्रकार कुंडलिनी योग - शरीर चेतना के विभिन्न केंद्रों को जगाकर मन की शक्तियों के जागरण की प्रक्रिया है। चेतना के विभिन्न केन्द्र मेरुदंड में अवस्थित शक्ति भंवर कहलाते हैं । एक एक चक्र की शक्तियां जाग्रत होते जाने से चैतन्य स्थिति में परिवर्तन-उन्नयन होता जाता है। प्रथम चक्र मूलाधार से लेकर छठवें आज्ञाचक्र तक जागृत होने पर चेतना के स्तर में अंतर आता है, मन का विस्तार होता है और अंत में अभ्यास

 Copyright © 2020Authors

ISSN 2454-2695
Vol 6 Issue 10 October 2020

करते-करते मन के अतिक्रमण की अवस्था अर्थात कुंडलिनी जागरण की अवस्था पहुंचती है। तब साधक अपने को विराट चेतना में अनुभव करते हुए निहाल हो जाता है।

सन्दर्भ सूची

1. द्विवेदी, श्यामाकान्त, भारतीय शक्ति साधनाः स्वरुप एवं सिद्धान्त, पृ.187
2. श्वेताश्वतर उपनिषद 6.11
3. सरस्वती, स्वामी सत्यानन्द, कुण्डलिनी योग, पृ. 70
4. हठ प्रदीपिका 3/01, हठरत्नावली 2/124
5. हठयोग प्रदीपिका 3.1-3
6. सौन्दर्य लहरी 10
7. पण्ड्या, प्रणव, अखण्ड ज्योति, वर्ष 64, अंक 9, पृ. 41
8. हठयोग प्रदीपिका 3/100
9. हठरत्नावली 2/125-127
10. श्वेताश्वतरोपनिषद 2/12
11. Sir John Woodruffe – The Serpent Power, Pp.23
12. श्रीमाली, मन्दाकिनी, प्रज्ञापुरुष का समग्र दर्शन, पृ. 7.30
13. मूलाधारे आत्मशक्ति कुण्डलिनी पर देवता।। महायोग विज्ञान, घेरण्ड सहिता 3/49
14. सा चोक्ता कुण्डलीनाम्ना कुण्डलाकारवाहिनी। प्राणिनां परमा शक्तिः सर्वशक्तिजवप्रदा।। योगवशिष्ठ
15. हठप्रदीपिका 3/105
16. योगबीज 91
17. शिव संहिता 2/24
18. योग रसायन 81
19. आचार्य , श्रीरामशर्मा, अखण्ड ज्योति, वर्ष 64, अंक 9, पृ. 41
20. आचार्य, श्रीरामशर्मा, अखण्ड ज्योति, वर्ष 50, अंक 1, पृ. 45
21. शिवसंहिता 5/81
22. महायोग विज्ञान (5.35 वांगमय)
23. स्वामी विवेकानन्द, राजयोग पृ. 51
24. आचार्य, श्रीरामशर्मा, गायत्री महाविज्ञान (संयुक्त संस्करण), पृ. 68
25. षट्चक्रनिरूपणम, श्लोक 10
26. शारदातिलकम् 1/53-57
27. 'शक्तिः कुण्डलिनी विश्वजननी व्यापार बद्धोद्यता।।' ज्ञानार्णव तंत्र
28. आचार्य, श्रीराम शर्मा, अखण्ड ज्योति, वर्ष 50, अंक 1, पृ. 45
29. शण्डिल्य उपनिषद्, अध्याय 1, योग कुण्डलिनी उपनिषद् अध्याय 1
30. आचार्य, श्रीराम शर्मा, अखण्ड ज्योति, वर्ष 48, अंक 11, पृ.
31. आचार्य, श्रीराम शर्मा, अखण्ड ज्योति, वर्ष 50, अंक 1, पृ. 45
32. तंत्रसाधना सार, पृ. 27
33. षट्चक्रनिरूपणम, श्लोक 4
34. हठयोग प्रदीपिका, 3/109
35. षट्चक्रनिरूपणम, श्लोक 4 का विवरण

Copyright © 2020Authors

36. हठयोग प्रदीपिका 3/109
37. मण्डल ब्राह्मणोपनिषद् 1/2/6
38. शिव संहिता 5/77-79
39. गोरक्ष शतकम् 30, योगबीज 87
40. हठयोग प्रदीपिका 3/101, योग ध्यानबिन्दु मंत्र 67-68
41. हठयोग प्रदीपिका 3/2
42. योग रसायन 72-73
43. योगकुण्डल्युपनिषद मंत्र-1/8
44. हठप्रदीपिका 3/120
45. योग रसायन 93
46. हठरत्नावली 3/58, हठप्रदीपिका 1/27
47. हठरत्नावली 3/68, हठरत्नावली 3/58
48. मेदःश्लेष्माधिकः पूर्वं षट्कर्माणि समाचरेत्। हठप्रदीपिका 2/21
49. हठरत्नावली 2/2, हठप्रदीपिका 2/6, 2/41, हठप्रदीपिका 2/75
50. हठरत्नावली 2/25
51. घेरण्ड संहिता 5/69
52. योग रसायन 62
53. हठप्रदीपिका 2/66
54. हठप्रदीपिका 2/67
55. योग रसायन 85
56. योग रसायन 89
57. योग रसायन 90
58. हठरत्नावली 2/68-69
59. योगकुण्डल्युपनिषद मंत्र-1/45-46, हठरत्नावली 2/08
60. वशिष्ठ संहिता 3/50, योग रसायन 95, हठरत्नावली 2/63-64
61. हठप्रदीपिका 3/65-68, योग रसायन 96
62. शिवसंहिता 5/164-165, गोरक्षशतक 31, हठरत्नावली 2/08, 2/68-69
63. योग रसायन 97
64. हठप्रदीपिका 3/10, हठरत्नावली 2/39
65. हठरत्नावली 2/46, हठप्रदीपिका 3/23
66. हठप्रदीपिका 3/26
67. हठरत्नावली 2/61-62, हठप्रदीपिका 3/63
68. हठप्रदीपिका 3/5
69. घेरण्ड संहिता 3/49-56
70. घेरण्ड संहिता 3/57
71. घेरण्ड संहिता 3/82
72. घेरण्ड संहिता 3/84
73. घेरण्ड संहिता 3/61-72
74. घेरण्ड संहिता - 3/34-36, 44-51
75. हठप्रदीपिका 3/10, हठरत्नावली 2/39

 Copyright ⓒ 2020Authors

76. हठरत्नावली 2/82
77. हठरत्नावली 2/128
78. योग रसायन 101
79. वशिष्ठ संहिता 3/51
80. ध्यानबिन्दु उपनिषद मंत्र 68-69
81. सौभाग्य लक्ष्युपनिषद् 3/1-3
82. योगकुण्डल्युपनिषद मंत्र-1/83-87, योगचुडामणि मंत्र-1/37-39
83. त्रिपाठी, रुद्रदेव, रुद्रयामल तंत्र, पृ. 71
84. योगचुड़ामणि उपनिषद 33-35
85. योगशिखोपनिषद 6/55, योगचुडामणि उपनिषद 44
86. हठप्रदीपिका 3/102-104
87. षटचक्रनिरुपण 1/13
88. योग रसायन 102
89. वशिष्ठ संहिता 3/56
90. योग रसायन 113
91. योग रसायन 114-15

 Copyright ⓒ 2020Authors